॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

प्रभु! मेरा जो क्रियात्मक जीवन है मैं उसे सदैव चाहता रहता हूँ कि मेरा जीवन इस संसार में कर्मठता को प्राप्त होता रहे। क्योंकि कर्मठता ही तो जीवन है अकर्मण्यता ही मृत्यु हैं, जिसे हमें जानना है हम सदैव अपने जीवन में विचार-विनिमय करते रहते हैं। हे भगवन्! तू वास्तव में विचारकों का भी विचारक है सदैव अखण्ड रहने वाला है तेरा संसार में कोई विभाजन भी नहीं कर पाता, तू इतना महान् है और विभु माना गया है जो सर्वत्र ओत-प्रोत है। मैं आपके चरणों की वन्दना करने आ रहा हूँ, प्रभु! यह जो अन्तरिक्ष है यह आपका मस्तिष्क ही है, प्रभु! ये जो दिशाएँ हैं यही तो आपकी भुजाएँ हैं यह पृथ्वी ही तो आपके तालू का कार्य कर रही है, भगवन्! आप जो पृथ्वी पर विचरने वाले नदीवत हैं यह आपके नाना स्त्रोत हैं, आपके शरीर के स्त्रोत हैं पर्वत अस्थियों का कार्य करते रहते हैं। भगवन्! यह जो सारा जगत है यह एक ब्रह्म के स्वरूप में मुझे दृष्टिपात आ रहा है।

प्रभु! यह जो संसार मुझे दृष्टिपात आ रहा है यह क्या है? इसको मैं जान नहीं पाता, जहाँ केवल अपने ही मानववत को नष्ट किया जाता हो। प्रभु! मुझे यह जगत सुन्दर प्रतीत नहीं होता, मुझे तो केवल एक ब्रह्म ही प्रतीत होता है जिसका यह विराट ब्रह्माण्ड एक शरीरवत् प्रतीत होता है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

अंक : 553 कुल पृष्ठ संख्या समग्र अंक : 628
वर्ष : 47 44 समग्र वर्ष : 53

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
1. प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	3
2. अनुक्रम		4
3. प्राण की विस्तृत प्रणाली पवित्र हो	पूज्यपाद-गुरुदेव	5-18
4. प्राचीन और आधुनिक संस्कृति की तुलनात्मक मीमांसा	पूज्यपाद-गुरुदेव एवम् महर्षि महानन्द जी	19-37
5. ऋषियों के उद्‌गार		38
6. दान, पुस्तकों की सूची व पुस्तक प्राप्ति के स्थान तथा सूचना इत्यादि		39-42

ऋग्वेद ब्रह्म पारायण याग

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से पूज्यपाद-गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की सद्‌प्रेरणा एवम् आशीर्वाद से वैदिक अनुसन्धान समिति द्वारा प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी ऋग्वेद ब्रह्म पारायण याग का आयोजन आर्य समाज मालवीय नगर नई दिल्ली के प्रांगण में दिनाँक 7 दिसम्बर 2018 से 9 दिसम्बर 2018 तक बड़े हर्ष एवम् उल्लास के साथ आयोजित किया जा रहा है जिसमें आप सभी अपने सम्बन्धियों, मित्रों सहित सादर आमन्त्रित हैं।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पंजी.)

आप सभी को दशहरा एवम् दीपावली की हार्दिक शुभकामनाएँ।

।। ओ३म् ।।

प्राण की विस्तृत प्रणाली पवित्र हो

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेद वाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। वह परमपिता परमात्मा एक अनुपम माने गए हैं, जिसका ज्ञान और विज्ञान नितान्ता में परणित किया गया है, क्योंकि जो परमपिता परमात्मा ज्ञान और विज्ञानमयी स्वरूप माने गए हैं उस परमपिता परमात्मा की महती अथवा उसके गुणों का गुणवादन प्रायः हमारे यहाँ होता रहता है। तो आज हम जब उस परमपिता परमात्मा की महती में गमन करते हैं तो प्रायः हमें ऐसा दृष्टिपात आता है कि सर्वत्र यह जो विज्ञानमयी धारा है अथवा मानवीय जो मस्तिष्क है उस सर्वत्र धाराओं में प्रभु का गमन हो रहा है अथवा उसमें वह रमण कर रहा है। परन्तु हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में भिन्न-भिन्न प्रकार की विवेचनाएँ होती रहती हैं, उन विवेचनाओं की धारा में कहीं राष्ट्रवाद का वर्णन आता है कहीं विज्ञानवाद का वर्णन आता है कहीं और भी नाना प्रकार के वाद हैं और उन वादों का वर्णन होता रहता है।

राष्ट्र

जब हम राष्ट्रवाद की विवेचना करते हैं तो हमारा यह राष्ट्र कैसा होना चाहिए, इसके ऊपर हमारा वैदिक साहित्य और एक-एक वेद के मन्त्रों के चिन्तन करने से राष्ट्र की महानता का वर्णन प्रायः हमारे वैदिक

साहित्य में आता रहता है। परन्तु आज का हमारा वेद मन्त्र राष्ट्रवाद के लिए केवल इतना उद्घोष कर रहा है। कि हे राजन्! तू अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाने का प्रयास कर और अपने राष्ट्र को तू विष्णु राष्ट्र की स्थापना कर, जैसे विष्णु सतोगुण से पालन करने वाला है। हे राजन्! तू भी विष्णु बन करके तू अज्ञान को समाप्त करके प्रकाश में सतों में लाने का इस समाज को कर्त्तव्यग्रहः मानो इसी में तू रत्त हो। तो वेद का मन्त्र राष्ट्रवाद की चर्चा करता है और राष्ट्रवाद के लिए कहता है कि जब तुम राष्ट्र के अन्तिम सूत्र में प्रवेश करोगे, तो राष्ट्रवाद अपने में कोई राष्ट्रवाद नहीं है। वह तो केवल प्रजा और समाज को कर्त्तव्यवादी बनाने के लिए उसका निर्वाचन, उसका क्रियाकलाप होता रहता है और यदि राष्ट्रवाद मानव समाज को उस कर्त्तव्यवाद में नहीं ला सका है, प्रकाश में नहीं ला सका है, तो उस राजा का राष्ट्र वह राज्य, वह प्रजाओं के ऊपर अनुशासन करता हुआ अपने में अभिमान को जागरूक कर लेता है। हमारे यहाँ राष्ट्रवादों में भी भिन्न-भिन्न प्रकार के वादों का जन्म हुआ है, कहीं साम्यवाद की कल्पना कर रहा है प्राणी, कहीं और भी नाना देखो राष्ट्रवृत्तियों के वादों में रत्त होने वाला है। कोई देखो नाना प्रकार के उन यागों में लगा हुआ है जो अश्वमेध रूपों में जिनकी प्रतिक्रियाएँ कहलाती हैं।

साम्यवाद

आज का वाक् तो बड़ा विचित्र आ गया है साम्यवाद की कल्पना करते हैं तो साम्यवाद में अन्तिम सूत्र में शासन की आवश्यकता नहीं। साम्यवाद उसे कहते हैं जहाँ राजा के राष्ट्र में प्रत्येक महान् बुद्धिजीवी बन जाता है और बुद्धिजीवी बन करके अपने कर्त्तव्य का पालन करता है। उस कर्त्तव्य में भी जिनकी आस्था अपने में न चाहने वाला हो, ऐसा जो राष्ट्रवेत्ता है वह समाज में महान् बन करके रहता है। मेरे पुत्र महानन्द जी ने कई काल में मुझे वर्णन कराया कि रूढ़िवाद का खण्डन

होना चाहिए। क्योंकि जितना भी अज्ञान पनपेगा, उस अज्ञानता से रूढ़ियों की उपलब्धि हो करके उनका सँकीर्ण हृदय बन जाता है और सँकीर्णता ही मृत्यु है, राष्ट्र की मृत्यु मानी गई है। राष्ट्र की मृत्यु क्या है सँकीर्णता, व्यापकता का नाम जब राष्ट्र अपने राष्ट्र को व्यापक बनाता है और व्यापकवाद में ले जाता है तो कर्त्तव्य की वेदी पर निहित हो करके प्राणी मात्र उसी में रत्त हो जाता है। मैं साम्यवाद की विवेचना नहीं, केवल यह चर्चा कर रहा हूँ साम्यवादी कहते हैं कि हम प्रजा को साम्य बनाना चाहते हैं, सम बनना चाहते हैं परन्तु जब प्रजा सम बन जाती है, कर्त्तव्यवाद आ जाता है तो राजा स्वतः कर्त्तव्यवादी बन करके साम्यवादी बनता है। यदि वह प्रजा के वैभव को अपने में संग्रह करने वाला है तो राजा साम्यवादी नहीं कहलाता। एक वह राष्ट्र होता है जिस राष्ट्र में कर्त्तव्यवाद की वेदी के ऊपर मानव अपनी विस्तृत प्रणाली को पवित्र बनाता हुआ जैसे यज्ञशाला में याग करने वाला यजमान अग्नि के मुखारबिन्द में यज्ञ आहुति प्रदान कर देता है और वह यज्ञ आहुति जब अग्नि के मुखारबिन्द में जाती है तो अग्नि अपने लिए नहीं ग्रहण कर रही है, वह अग्नि जल को प्रदान कर देती है, वही गुरुत्व पृथ्वी को प्रदान कर देती है, वही वायु में प्रवेश कराती है, अन्तरिक्ष को प्राप्त हो जाती है। तो परिणाम क्या? कितनी सुन्दर निःस्वार्थ प्रणाली है।

जब राजा के राष्ट्र में यह प्रणाली पवित्र होती है जैसे यज्ञशाला में यजमान याग कर रहा है और वह याग में निःस्वार्थ प्रणाली का स्वामी कौन है, वह यज्ञ आहुति देने वाला है, वह जो जल को परोक्षण कर रहा है। जल को परोक्षण प्रतिक्रिया में ला रहा है और वह कहता है, हे अमृत! तू मेरा देव है तू खाद्यों में दृष्टिपात आता है क्योंकि तू उसका पिण्ड बनाता है। तू नाना प्रकार की वनस्पतियों के रूप में उनके नाना प्रकार के खनिज इत्यादियों में तेरा जो वह जल का ही तो, अमृत का ही तो पिण्ड है। हे पिण्ड! मैं तुझे सरस्वती के नाम से वर्णन करा रहा हूँ। हे पिण्ड का निर्माण करने वाले तू बुद्धि को सौम्य में परणित कराने

वाला है। तू जब वह पश्चिम दिशा में तेरी आभा नियुक्त होती है तो अन्न का भण्डार तेरे से जन्म लेता है और जन्म ले करके वही अन्न का भण्डार तेरे लिए महान् पवित्र बन जाता है। प्राणी मात्र उसी में खिलवाड़ करता है। तो वह यजमान अपने में परोक्षण कर रहा है, 'समुद्राम् भविते ब्रह्मा' जैसे जल के अनेक रूपों में जल ही जल प्रतीत होता है, वह अमृत है, वह आहा है, सम्भूति है, वह अमृत प्राण को देने वाला है।

विचार-विनिमय क्या है? मैं दूरी न चला जाऊँ। विचार केवल यह कि जैसे यह विस्तीर्ण प्रणाली यज्ञ में सृष्टि के पिता ने सृष्टि के प्रारम्भ में मानव समाज के हृदय में यह प्रेरणा दे करके याग की रचना हुई। जब विज्ञान के आङ्गन में वैज्ञानिक प्रवेश करता है तो सुगन्धि को ले करके चलता है, उस सुगन्धि का परिवर्तन जब दुर्गन्धि में हो जाता है तो पुनः भी वह सुगन्धि कर रहा है। मैं आज तुम्हें एक बड़ी विचित्र-सी गाथा वर्णन कर रहा हूँ और वह वर्णन यह है कि 'सम्भवा लोकाम्' वह यज्ञ द्वारा देखो यजमान् अपने में याज्ञिक बना हुआ है और वह अपनी पवित्र हृदय की वाणी को अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके और वायु में गमन कराती हुई द्यौ लोक में प्रवेश रही है और वह जब द्यौ लोक में प्रवेश करती है तो द्यौ ही तो मानव का पवित्र बनना चाहिए। यही द्यौ ही लोक है तो पवित्रतम बनाने वाला है वह पवित्र होना चाहिए।

प्राण

मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना में न जाता हुआ, केवल आज मैं तुम्हें प्राण के ऊपर विवेचना देना चाहता हूँ। यह प्राण कितना सखा है यह प्राण कहाँ-कहाँ गति कर रहा है संसार को और परमाणु को गतिशील बना रहा है। यह प्राण कहीं वायु के रूप को धारण करता है, यही प्राण कहीं जल के रूप को धारण करता है, यही प्राण कहीं

देखो अग्नि के स्वरूप में प्रवेश हो जाता है। तो यह प्राण जहाँ प्राण सत्ता विद्यमान है वहीं तो प्राण अपने में सखा बन रहा है। अपने में सखा बन करके ही तो विचित्र बन रहा है। मैंने प्राण के सम्बन्ध में तुम्हें बहुत-सी विवेचना दी हैं। प्राण के सम्बन्ध में नाना प्रकार की विवेचनाएँ होती रहती हैं। जब यह मानव शरीर का निर्माण हुआ किसी भी काल में, सृष्टि के पिता ने इसका निर्माण किया मानव शरीर का तो यह ब्रह्माण्ड की कल्पना करके ही शरीर का निर्माण हुआ 'पिण्डे ब्रह्माण्डम् ब्रह्मा वृताम्' वेद का वाक्य कहता है कि पिण्ड ब्रह्माण्ड की एक ही कल्पना की गई है। परन्तु देखो यह जब पिण्ड का निर्माण हुआ तो पिण्ड में ब्रह्माण्ड को भरण कर दिया। जब ब्रह्माण्ड को इसमें भरण कर दिया तो यही पिण्डाकार बन करके एक महानता में गति करने लगा। इसमें विद्यमान होने वाले देवताजन वह जो देवता क्रियाकलाप कर रहे हैं, बाह्य जगत् में वही अन्तर्जगत् में क्रियाकलाप कर रहे है। उन देवताओं का एक समय एक समूह एकत्रित हुआ और समूह एकत्रित हो करके वह अपने में चर्चा करते रहते थे। परन्तु देखो उन देवताओं में यह प्रतिभासित हो गया कि मैं कहाँ-कहाँ अपने में प्रवेश करूँ। तो सूर्य ने अपना वास देखो नेत्रों में किया और दिशाओं ने अपना वास श्रोत्रों में किया और पृथ्वी ने अपना वास घ्राण में किया। वायु ने अपना वास मुनिवरो! देखो यह स्पर्श में, स्पर्श इन्द्रियों में ओत-प्रोत करा दिया। जितने भी रस हैं संसार के जितने भी स्वादन हैं वह सब इन्द्रियों को प्रदान करते हैं। जब पाँच प्रतिभा में यह जगत् पँचीकरण दृष्टिपात आने लगा। जब यह पँचीकरण दृष्टिपात आने लगा, तो कुछ ऋषि-मुनियों ने यह विचारा कि हम प्राण सखा को जानना चाहते हैं, यह प्राण सखा कैसे जाना जाएगा?

ऋषि-मुनियों ने साकल्य बनाना प्रारम्भ किया, जैसे बाह्य जगत् वाला यजमान् नाना प्रकार की सुगन्धि पोष्टिक और देखो रोगनाशक, रुग्ण नाशक नाना प्रकार की औषधियों को एकत्रित करता है और वह

नाना प्रकार के साकल्य बनाता है। गृहस्थ श्रद्धामयी घृत को उसमें ओत-प्रोत कर देता है और ओत-प्रोत करके वह याग करता है। 'यागाम् ब्रह्म वाचोः' वह बाह्य जगत् में याग हो रहा है। इसी प्रकार योगीजन, साधकजन, आन्तरिक याग करते हैं। वह प्राण सखा के समीप प्राण को जानने का प्रयास करते हैं। यह प्राण कहीं वायु के गति रूप में रमण करता है, कहीं यही मुनिवरो! देखो यह विद्युत बन करके ऊर्ध्वा दे रहा है, कहीं अग्नि बन करके यह ऊर्जा में प्रवेश कर रहा है, कहीं दिशाओं में ओत-प्रोत हो करके अपने को सिमट रहा है, कहीं आपो में ओत-प्रोत हो करके उसमें अपनी धारा को रत्त करा देता है। कहीं पृथ्वी उसको गुरुत्व में परणित करा देती है।

यौगिक चर्चाएँ

परिणाम क्या हुआ मुनिवरो! देखो प्रत्येक इन्द्रियों का जो एक साकल्य बन गया है, वह साकल्य कौन गुरुत्व, अमृतत्व प्रकाशतत्व ऊष्णत्व अमृतत्व दिशातत्व और नाना प्रकार की रसा, 'रस्सत्वाम् ब्रह्म वाचाः' वही चन्द्रमा रूपों में रत्त रहने वाला इन सबका एक साकल्य बना दिया और वह साकल्य बना करके मुनिवरो! देखो वह यज्ञरूपी जो हृदयरूपी गुफा में एक याग हो रहा था, वह जो मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण करने वाला योगीजन इनका साकल्य बना करके आहुत कर रहा है। हुत करके अग्नि वह जो ज्ञान रूपी अग्नि जिसको ब्रह्मा अग्नि कहते हैं, यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकर की अग्नियों का चयन प्रायः होता रहा है। परन्तु वह जो ब्रह्मारूपी अग्नि है उस अग्नि को वह हृदय में प्रदीप्त करके और ब्रह्मरूप अग्नि में साकल्यों की प्रकृति के सूक्ष्म-सूक्ष्म तन्तुओं का साकल्य बना करके हुत कर रहा है। इससे अज्ञानता न आ जाए, तू ज्ञान में परणित हो जाए।

मेरे प्यारे देखो, इस प्रकार जब प्रत्येक मानव अपने जीवन को क्रियात्मक बना लेता है उस मानव के जीवन की धारा विचित्र बन जाती

है। देखो, मैं राष्ट्र की चर्चा कर रहा था और प्राण सखा की चर्चा कर रहा था। इनमें प्राण है इनमें उग्रता है। वह जब पृथ्वी का पिण्ड बनता है तो वह भी प्राण के कारण बनता है, जब जल रूप में रस आता है वह भी प्राण है, जब वह तेजोमयी अग्नि बन करके यह दाह कर देती है, अग्नि कहीं शीतल बन करके रहती है, कहीं यह उत्तेजित बन करके रहती है, उष्ण बन करके रहती है। कहीं यह अग्नि ज्ञानरूपी अग्नि बन करके रहती है, कहीं यही अग्नि राष्ट्रपिता के यहाँ राष्ट्रीय अग्नि बन करके रहती है, कहीं यह अग्नि अजामेध बन करके यही अग्नि राजा के राष्ट्र को पवित्र बनाती रहती है। उस अग्नि का भिन्न-भिन्न रूपों में चयन किया गया है। कहीं यही अग्नि है जब हम अग्निष्टोम याग करते हैं, जब हम अजामेध, पुत्रेष्टि याग नाना प्रकार के याग किया करते हैं तो यह वही तो अग्नि है। यह अग्नि 'ब्रह्म वाच प्रहे ब्रह्म लोकाम् प्राणम् ब्रह्म वाचाः, कहीं यही प्राण-सखा के रूप में स्वीकार की गई है, कहीं यही अग्नि प्रकाश के रूप में परणित हुई। जब राष्ट्र इस अग्नि का दुरुपयोग करना प्रारम्भ करता है, वह जो राष्ट्रीय अग्नि है, राष्ट्रीय अग्नि क्या है विस्तृत प्रणाली, जब विस्तृत प्रणाली देखो भ्रष्ट हो जाती है, तो उस राजा के राष्ट्रीयता भी नष्ट हो जाती है। उसका राष्ट्रीय स्तर समाप्त हो जाता है।

विचार क्या? मुनिवरो! देखो! यह भव्य अग्नि है। इस अग्नि का चयन करते हुए राजा के राष्ट्र में दुरुपयोग नहीं होना चाहिए। जब इस अग्नि का दुरुपयोग होना प्रारम्भ हो जाता है, यही अग्नि दाह बन करके राजा को अपने में निगल जाती है, राष्ट्र को समाप्त कर देती है। तो परिणाम क्या? मुनिवरो! देखो, मैं दूरी न चला जाऊँ। मैं योगियों की चर्चा कर रहा था, यौगिक क्षेत्रों में प्रवेश हो रहा था। जब यह विचार-विनिमय कहीं महाराजा अश्वपति के यहाँ होता रहता था। प्राण के ऊपर विवेचना मुनिवरो! बड़ी विचित्र मानी गई है। **जब तक यह प्राण इस शरीर में गति करता है, चित्त के मण्डल का निर्माण करता**

है, तो आत्मा इसमें वास करता है, जब यह अग्नि चित्त के मण्डल को ले करके गमन करता है तो आत्मा भी उसके साथ चला जाता है, आत्म-चेतना नहीं रहती, मानव का शरीर एक शव रूप में दृष्टिपात आने लगता है। वह दाह कहाँ चली गई, वह विचित्र प्राणधारा कहाँ चली गई? यहाँ यह प्राण कोई अपने में धारण कर रहा है, यह जल में भी प्राण, अग्नि में भी प्राण, पृथ्वी भी 'प्रमाणाम् ब्रह्मा पिण्ड व्रते' यही अन्न के रूप में , यही प्राण नाना प्रकार के धातु और पिपादों को ले करके पिण्ड बन जाता है। अन्न का पिण्ड बनता है, अन्न के पिण्ड बनाने से उस पिण्ड के रूप को समाप्त करता है, समाप्त करके पुनः उसको पिण्ड बनाता है, अग्नि में उसका पिण्ड बनाकर उसको अपना आहार बनाता है और जब आहार बना करके वही प्राणसत्ता ले करके मानव जीवन को प्राणी बना देता हैं।

वाह रे देव! तू कैसा विचित्र है, जब मैं तेरी रचना पर विचार करता हूँ, तेरी रचना को हम जान तो नहीं सकते, कैसा विचित्र है। मुनिवरो! देखो, पृथ्वी में जब कृषक इस पृथ्वी के गर्भ में बीज की स्थापना कर देता है, पिण्ड को वह पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश कर देता है। पृथ्वी के गर्भ में वही पिण्ड मुनिवरो! देखो पिण्डाकार अपने को समाप्त कर देता है। वह एक पिण्डाकार अंकुर के रूप में उपज जाता है, वह वही अन्नाद का एक पौधा बन जाता है और पौधा बन करके वही पिण्ड बनना प्रारम्भ होता है, वही पिण्ड बन करके सूर्य को प्रकाश देता है, जो अग्नि ऊष्ण बना रही है, वही तो उस पिण्ड को परिपक्व बना देता है और परिपक्व बना करके वही पिण्ड मानव अपने रसास्वादन के लिए उसी पिण्ड को सूक्ष्म बनाता है। उसी पिण्ड को नष्ट करता हुआ उसको एक खरल के रूप में लाता है, एक रेतस के रूप में लाता है। परन्तु उसके पश्चात् पुनः मेरी माता उसी पिण्ड को मिश्रण करके उसको जल के सँयोग से, जल की सँगतिकरण से मुनिवरो! उसका पिण्ड बना देती है और पिण्ड बना करके वही अग्नि में तपा करके, अग्नि से प्राणसत्ता

ले करके उसके पिण्ड के रूप में अग्नि को प्राण को गूँथ देती है और वही उदर में जाता है, उदर में प्रवेश करता है, देखो दन्त उसे पुनः रेतस बनाते हैं। अन्तड़ियाँ उसे रेतस बना देती हैं। नाना प्रकार के रेतस बना करके वही मानव प्राणसत्ता के रूप में कहीं रस बनता है, कहीं मज्जा बनता है, कहीं रेतस बन करके वह ब्रह्मचारी बन जाता है।

सँगतिकरण

वाह रे देव! तू कैसी विचित्र धारा वाला है। यह कैसा मैं एक रचना में चला गया हूँ। माता उस अन्न को तपाती रहती है, सँगतिकरण करती रहती है। इसलिए हमारे यहाँ यागों में सबसे प्रथम सँगतिकरण का एक विशेष वर्णन आया है और यह कहा है कि यह जो याग है यह सँगतिकरण और दानेषु मानी गई है। यह सँगतिकरण कर रहा है यजमान। उसको पिण्ड बना रहा है, यजमान उसका पिण्ड बनाता है, साकल्य एकत्रित करके पिण्ड बनाता है, सामग्री सामूहिक रूप में सब पदार्थों को लाता है। घृत के द्वारा पिण्ड बनाता है, पिण्ड बना करके उसको अग्नि के मुख में प्रवेश कर देता है वहीं अग्नि उसके सूक्ष्म वृत्तियों में पिण्ड को सूक्ष्म बना करके वायु में प्रवेश कर देता है, वहीं तर्पण करके सुगन्धि पौष्टिक हो करके वह कहीं मुनिवरो! देखो प्राणियों के नथनों के रूप में प्राण के रूप में प्राण-शक्ति प्रदान कर रहा है। कहीं वही देवताओं में प्राण-शक्ति, ऊर्जा उससे प्राप्त हो रही है। वायुमण्डल पवित्र हो गया है, उसका सँगतिकरण हो गया है और वही सँगतिकरण है जो मानव को विचित्र बनाता है, मानव के पिण्ड को बनाता है। मानव के पिण्ड को कौन बनाता है? मैं प्रभु को कहूँ तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। यही पिण्ड ब्रह्मा वही नाना प्रकार की देखो औषधियों का रस बनाता है, नाना प्रकार की औषधियों का, इन्हीं साकल्यों का रस बनता है जो यज्ञ में देवताजन पनपते रहते हैं। कहीं सूर्य से तेजोमयी का जन्म हो रहा है, कहीं अग्नि वृत्तियों में रत्त हो

रही है, उसको रेतस बनाया जा रहा है, पिण्ड बनाया गया है। उसे पान करता हुआ वही रसों के रूप में परणित हो गया। वह वनस्पतियों का रस बन गया है और वनस्पतियों का रस बन करके, माता-पिता ने एक सँगतिकरण किया। उस सँगतिकरण से यह मानव जीवन का पिण्ड बन गया, मानव शरीर का पिण्ड बन गया। कैसा पिण्ड बन गया? इसमें नाना प्रकार की अस्थियाँ कृतियों में रत्त हो गई हैं, यही तो प्राणसत्ता है। एक प्राणसत्ता ने पिण्ड बना दिया है, गूँथ करके पिण्ड बनाया है, निर्माणवेत्ता ने इसका पिण्ड बना दिया है और पिण्ड बन करके वह नाना प्रकार के रूपों में इस संसार में नाना क्रियाकलाप कर रहा है। कैसी क्रियाकलाप कर रहा है? कोई पुत्र के रूप में पिण्ड है, कोई पिता के रूप में पिण्ड है, कोई पत्नी के रूप में पिण्ड, कोई भौजाई के रूप में पिण्ड बना हुआ है, कोई राजा के रूप में पिण्ड है। जो पिण्ड में परणित हो करके आत्मा जितना त्याग और तपस्या में परणित हो जाता है, जितना वह पिण्ड अपने में पिण्डाकार को ऊर्ध्वा में ले जाता है, वह परमपिता परमात्मा की कृति को जान करके, मानवीयता को जान करके एक महानता की जो वेदी पर रत्त हो जाता है, वह प्राण-रूपी पिण्ड बन गया है वही पिण्ड अवस्था बनती रहती है। अवस्था के साथ-साथ वही पिण्ड रेतस बन गया है और पिण्ड रेतस बन करके, वही रेतस बन करके वही प्रकृति का सूक्ष्म स्वरूप बन गया है। उसमें शिशु है, उसमें अणु है, उसी में परमाणु है, उसी में सर्वत्र विज्ञान की धाराओं का जन्म हो जाता है।

रेतस और प्राण

मेरे प्यारे! देखो एक-एक पिण्ड को जब रेतस बनाया जाता है तो ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आने लगता है। एक-एक पिण्ड, एक-एक परमाणु को जब रेतस बनाया जाता है तो अणु के रूप में, परमाणु के रूप में अग्नियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। उन अग्नियों को वैज्ञानिक ले करके नाना

प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करता है। कोई यन्त्र राष्ट्र को भस्म कर देता है। कोई यन्त्र मानव को ही नष्ट करता है, कोई यन्त्र अन्तरिक्ष में जा करके वायुमण्डल को दूषित बना देता हैं वही तो रेतस से पिण्ड बना है और पिण्ड से रेतस बना है और रेतस दूषित हो गया है। तो मुनिवरो! देखो यह तो बड़ा विचित्र एक गहन जगत् है, जिसके ऊपर मैं नाना प्रकार की विवेचना प्रायः देता रहता हूँ। देखो में यागों की चर्चा करता रहता हूँ, याग में परणित होता रहता हूँ। विचार यह आता रहता है कि यह कैसा अनुपम जगत् है जिसके ऊपर मानव अपने में वृत्तियों को धारण कर रहा है, अपने में ओत-प्रोत हो करके अपनी धारा को जानना चाहता है। मृत्यु से विजय होना चाहता है। जब तक यह रेतस बनना, पिण्ड बनना समाप्त नहीं होता तब तक इसे मोक्ष की पगडण्डी भी प्राप्त नहीं होगी, वहाँ क्योंकि वह एक रस होना है उसमें, तो एक रस हो करके ही तो गति कर सकता है।

मेरे प्यारे देखो! आज मैं विशेष विवेचना नहीं देने आया हूँ। केवल तुम्हें यह वाक् प्रकट कराने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव को यह जान लेना चाहिए। इसी से तो विवेक उत्पन्न होता है और विवेक से ही मोक्ष की पगडण्डी प्राप्त होती है। जब तक मानव इसको जान नहीं सकेगा, यह वास्तव में क्या है, जिसके ऊपर हम इतने अपने को रत्त कर रहे हैं यह क्या है, तो इसके ऊपर विचार-विनिमय जब तक नहीं होगा, यह नाना प्रकार का विज्ञान क्या है, आध्यात्मिकवाद क्या है, इसमें सबमें प्राण-क्रिया अपने में क्रियाकलाप कर रही है, प्राणों से गुथा हुआ जगत् है। प्राणों से पिण्ड बना हुआ है, प्राण ही रेतस कहलाता है, प्राण ही भिन्न-भिन्न रूपों में दृष्टिपात आता है। आज मैं जब बाह्य-जगत् में प्रवेश करता हूँ तो बाह्य-जगत् में भी एक-एक कृतियों में प्राण ही प्रतिष्ठित हो रहा है। एक-एक अणु की प्रतिभा में देखो वह प्राणसत्ता ही तो है जिसको वह अग्नि अन्तरिक्ष में प्रवेश करके लोकों पर आक्रमण करता है।

मङ्गल का विज्ञान

मुझे स्मरण आता रहता है, भारद्वाज मुनि के यहाँ मङ्गल से एक यान उड़ान उड़ता है और वह मङ्गल पर जा करके आक्रमण करता है, क्योंकि मङ्गल का वैज्ञानिक पूर्वकाल से एक महान् बना हुआ है। आज भी आधुनिक जो वर्तमान का काल चल रहा है उस काल में भी देखो! मङ्गल का वैज्ञानिक ऊर्ध्वा में गति कर रहा है। नाना प्रकार के यान इस पृथ्वी-मण्डल पर आ रहे हैं। नाना प्रकार के यान मङ्गल से आ रहे हें, नाना प्रकार के यान बुद्ध में आ रहे हैं; नाना प्रकार के यान गति करते हुए शुक्र लोक में आ रहे हैं। तो यह नाना प्रकार के लोकों में उसके यान भ्रमण करते हैं। कहीं मानव को ले जाते हैं, कहीं मानव को उसका चित्र ले करके उसको त्याग देते हैं। कहीं देखो वह उनका यान वृत्तियों में अपने में विकृति के रूप में विकृत हो जाता है। प्राणीमात्र को नष्ट कर देती है, कुछ ही समय हुआ मुझे ऐसा दृष्टिपात हुआ है कि **मङ्गल के वैज्ञानिको ने बुद्ध मण्डल पर आक्रमण किया** और आक्रमण करके वह अग्नि विस्फोट विकृतियों के रूप में उसका जीवन अस्वस्थ हो गया और जीवन के अस्वस्थ होने पर वही मण्डल अपने में कृतिरूप बन गया है। इस प्रकार का विज्ञान प्रायः यह प्राण रूप सखा से पिरोया हुआ जिसमें जितने प्राणसत्ता को जान लिया है उतना उसका विज्ञान एक महान् पवित्र बन गया है। महानता में गति करने लगा है।

आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता

देखो, विज्ञान केवल मृत्यु ही मृत्यु को पुकार रहा है और जब आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता विज्ञान के रूप को जान लेते है, प्राण सखा को जान लेते है, वह चित्त के मण्डल को जान लेते हैं, वह विवेक में परणित हो करके सर्वत्र अग्नि को समेट करके शीतल बना करके शान्ति की स्थापना करके अपने में शान्त हो जाते हैं। तो मेरे प्यारे देखो, इस प्रकार का विज्ञान हमारे यहाँ इस प्रकार की धाराओं वाला

यह ज्ञान और विज्ञान है इसको हमें विचारना चाहिए। इस धारा को जान करके ही हम संसार से पार हो सकते हैं।

पवित्र राष्ट्र

देखो जहाँ मैं राष्ट्रवाद की चर्चा कर रहा था। राष्ट्रवाद कैसा हो? प्रत्येक रूप में पवित्र होना चाहिए। कर्त्तव्यवाद की वेदी पर विस्तृत प्रणाली में पवित्र होना चाहिए। जब तक मानव के शरीर में प्रणाली पवित्र होती है तब तक मानव का शरीर स्वस्थ बना रहता है। जब विस्तृत प्रणाली में भेदारोप (दोषारोपण) हो जाते हैं, उसी काल में मानव का शरीर रुग्ण होना प्रारम्भ हो जाता है। वह रुग्ण रहता हुआ, वह विशाल रूप को भी धारण कर लेता है। इसी प्रकार राजा के राष्ट्र में यदि विस्तृत प्रणाली में दोष आ गया है, तो दोष को पवित्र बनाएँ। उस दोष का शोधन करें और यदि शोधन नहीं होता तो धीमे-धीमे वह ऐसा एक रुग्ण बन जाएगा कि राष्ट्र का उदर समाप्त हो जाएगा। जब राष्ट्र का उदर समाप्त हो गया, तो राष्ट्र में रह ही क्या गया? उसकी प्राण सत्ता भी चली गई, उसका नाना क्रियात्मक जीवन भी चला गया। इसी प्रकार मानव को, राजा को चाहिए कि अपने में विस्तृत प्रणाली पवित्र हो और याग जैसे उत्तम क्रियाकलापों को करते हुए बाह्य प्रणाली पवित्र रहेगी और यदि हम अपनी शरीर को क्रियात्मक सँचार रूप में क्रियात्मक बना लेते हैं तो उसकी विस्तृत प्रणाली पवित्र रहेगी और उस प्रणाली का परिणाम यह होगा कि मानव का शरीर स्वस्थ रहेगा और जब यह स्वस्थ रहेगा तो स्वस्थ रहने से ही यह संसार के नाना प्रकार के क्रियाकलापों में परणित हो करके अपने चित्त के मण्डल में महान् से महान् संस्कारों को जन्म देगा और व जन्म-जन्मान्तरों जब चित्त मण्डल में प्रवेश कर जाते हैं वही तो जन्मों को धारण कराते हैं।

आज का वाक् यह क्या कह रहा है? मैं बहुत दूरी चला गया हूँ वाक् उच्चारण करते-करते। विचार केवल यह कि बेटा! यह प्राण

कैसे पिण्ड बनाता है, कैसे पिण्डों का निर्माण हो रहा है। यही तो प्राण सखा है इसको जानने के लिए मैं शेष चर्चाएँ कल प्रकट करूँगा। योगीजन इस प्राण को कैसे अपने में वशीभूत करते हैं यह चर्चाएँ कल प्रकट करेंगे। **आज का वाक् केवल विचार यह है कि हम अपने को महानता में परणित कराते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएँ।**

मेरे प्यारे देखो माता के गर्भस्थल में हम जैसे शिशुओं का पिण्ड ही तो बनता है पाँचों प्रकार की धार्मिक धाराओं को ले करके पिण्ड इसमें एक-एक परमाणु को पिरो देता है। माता प्रसन्न हो रही है, जगत् प्रसन्न हो रहा है। यह पिण्डम् ब्रह्मा व्रतम् देवाः। आज देखो पिण्ड और ब्रह्माण्ड की जब हम कल्पना करते हुए व्यष्टि-समष्टि में प्रवेश करा करके अपने जीवन को ऊँचा बनाया करते हैं। यह है बेटा! आज का वाक्।

आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय यह है कि प्राण की विस्तृत प्रणाली पवित्र हो करके समाज ऊँचा बनेगा। यह है बेटा! आज का वाक्। समय मिलेगा शेष चर्चाएँ हम कल प्रकट करेंगे। आज का वाक् समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

महर्षि महानन्द जी—अच्छा भगवन्!
पूज्यपाद गुरुदेव—आनन्द रहो!

दिनाँक : 20 सितम्बर, 1985
समय : रात्रि 8 बजे
स्थान : ई-31 लाजपत नगर-3
नई-दिल्ली

।। ओ३म् ।।

प्राचीन और आधुनिक संस्कृति की तुलनात्मक मीमांसा

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण किया जाता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि जो परमपिता परमात्मा इस जड़वत् में और चेतन्यवत् का जो स्त्रोत है वह सर्वत्रता में उस सूत्र की भाँति रहता है उस महामना देव की महिमा का हम सदैव गुणगान गाते रहते हैं और उसकी महिमा के ऊपर विचार-विनिमय करते रहते हैं और विचारते रहते हैं वह कितना महिमावादी है। उसका जो यह ब्रह्माण्ड है वह अनुपम माना गया है क्योंकि वह वरुण है, वरणीय योग्य है, जो भी मानव उसको अपना वरणीय बना लेता है अथवा उसे अपने प्रतिभा का स्त्रोत स्वीकार करता है वह मानव अपने में महान् है और वह विचित्र माना गया है।

प्रेरणा का स्त्रोत

आज का हमारा वेद मन्त्र नाना प्रकार की हमें प्रेरणा देता रहता है क्योंकि वह परमपिता परमात्मा प्रेरणा का स्त्रोत है और वह प्रेरणा का एक महान् विस्तृत माना गया है जिसके ऊपर परमपिता परमात्मा परम्परागतों से ही प्रेरणा का स्त्रोत बन करके और प्रेरणा प्राप्त करता

हुआ वह संसार की ऊँची-ऊँची उड़ानें उड़ता रहता है। बहुत पुरातन काल हुआ हम नाना प्रकार की प्रेरणाओं को ले करके और अपने मानव जीवन को विचित्र बनाते रहे हैं और भिन्न-भिन्न प्रकार की उड़ानें उड़ते रहते थे। तो मेरे प्यारे! आज का हमारा वेद मन्त्र उस महान् प्रेरणा का स्त्रोत है। मेरे प्यारे महानन्द जी को भी आज दो शब्दों का उद्गीत गाना है। परन्तु आज का हमारा वेद मन्त्र यह कह रहा है कि हम प्रेरणादायक बनें और हमारा वाक् वही चल रहा है जो विद्यालयों का प्रतिशोध प्रवृत्तियाँ हैं। जो विद्यालय में क्रियाकलाप होते रहते हैं और विज्ञानशाला में नाना प्रकार के विज्ञानवेत्ता अपने राष्ट्रीयता को ऊँचा बनाने में लगे हुए हैं।

मेरे प्यारे! देखो अश्वपति की चर्चाएँ चल रही हैं और महाराजा अश्वपति के यहाँ जब राष्ट्र का नियम बना तो मनु जी ने उस निर्माणब्रहे उस राष्ट्रवाद की चर्चा को ले करके ही उन्होंने उसी की अपने में क्रियाकलापों की चर्चाएँ की हैं और यह कहा है कि मनु जी ने मानव समाज को विभक्त करने में मानव समाज को सुगठित करने में दोनों प्रकार का प्रयास किया है। परन्तु देखो वह कहाँ चला गया है, इतना तो मुझे ज्ञान नहीं, परन्तु द्वापर के काल में उस प्रणाली का ह्रास होना प्रारम्भ हुआ था और वहीं देखो महाभारत भूमि एक राष्ट्रीय भूमि न बन करके और वह एक प्रेरणा का स्त्रोत न बन करके वह अपने में एक रक्तमयी धारा बन गई, परन्तु देखो यह स्वार्थ होता है जिस भी काल में समाज में या राष्ट्रवाद में रक्त की धाराएँ प्रारम्भ हो जाती हैं तो इसमें स्वार्थप्रता राष्ट्रीय हुआ करती है क्योंकि समाज की नहीं होती। इसमें राष्ट्रवाद के ऊपर आरोपण किया जाता है। आरोपण ही नहीं किया जाता वह सत्यवाद कहा जाता है। परन्तु अब मेरे प्यारे महानन्द जी अपने दो शब्द उच्चारण करेंगे क्योंकि इनके हृदय में एक वेदना रहती है और वह वेदनामयी विचारों को ले करके वह राष्ट्रवाद

की चर्चाएँ किया करते हैं। अब मेरे प्यारे महानन्द जी अपने विचारों को व्यक्त करेंगे।

पूज्य महर्षि महानन्द मुनि जी के उद्‌गार

ओ३म् सर्वाणगतम् ब्रह्माः वस्त्वश्चष्यमाः ममस्त प्रजाम् दिव्याः

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषि मण्डल! अभी-अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अपने कुछ विचारों को व्यक्त कर रहे थे। मैं तो अपने में प्रायः मानवता का दर्शन करता रहता हूँ परन्तु मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ऐसी वार्ता प्रकट कर रहे हैं कई समय हो गया है जिन चर्चाओं को इस समय उच्चारण करने में मुझे कोई लाभप्रद नहीं हो रहा है क्योंकि मेरी प्यारी माता की प्रशन्सा कर रहे हैं। कई समय हो गया है माताओं के महत्व का वर्णन कर रहे हैं वाक् तो दर्शनों से गुथा हुआ है, वाक् तो ऐसा है जिसको मार्ग पद्धति कह सकते हैं यह जो आर्ष पद्धति है यह मेरे पूज्यपाद गुरुदेव उसका निरूपण करते रहते हैं और उसके ऊपर अपना विचार देते हुए आज मैं उनके विचारों को ले करके चलूँ तो आश्चर्य होगा। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव यह कहते हैं इनके वाक्यों में आया कि माता को प्रातःकालीन याग करना चाहिए और बाल्यों की पंक्ति बना करके और अपना मानव दर्शन का उपदेश देना चाहिए। परन्तु देखो पुरातन काल हुआ हमारे यहाँ साहित्य में विकृतियाँ आईं, साहित्य में विकृतियाँ किस काल में आती हैं जबकि समाज में स्वार्थप्रता और अज्ञान आता है। सबसे प्रथम मैं महाभारत के काल में नहीं, तुम्हें राम के काल में ले जाना चाहता हूँ जिस वाक् को मेरे पूज्यपाद गुरुदेव प्रकट करते रहे हैं। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने यह वर्णन कराया कि काग्भुषण्ड जी की माता ने एक पंक्ति में तीनों ब्रह्मचारियों को ब्रह्म का उपदेश दिया। परन्तु आधुनिक जगत् वर्तमान का काल उन्हें क्या कहता है कि काग्भुषण्ड तो एक पक्षी है और वह कागा थे तो उनको

कागोभुषण्डी क्योंकि वह लोमश मुनि की शरण में आए और महर्षि लोमश मुनि से उनका परस्पर विचार-विनिमय होता रहता। मैं भोले प्राणियों से यह जानना चाहता हूँ, मैं यह वाक् जानना चाहता हूँ कि जो कागा है और महर्षि लोमश जो महान् तपस्वी हैं परन्तु वह एक ऋषि का काल का समन्वय हो सकता है। यह मेरे विचार में नहीं आ रहा है क्योंकि यह एक युक्तियाँ तो आती हैं जैसे पूज्यपाद गुरुदेव कहते हैं कि काग्भुषण्ड जी ऋषि थे, परन्तु आधुनिक जो वर्तमान का काल हैं उन्हें ऋषि नहीं कहता, उन्हें काग्भुषण्ड जी कहते हैं और लोमश मुनि की शरण में कहते हैं। परन्तु पूज्यपाद गुरुदेव यह कहते हैं कि लोमश मुनि और काग्भुषण्ड जी ने दोनों ने रावण का अश्वमेध याग कराया था। जो अश्वमेध याग कराता हो क्या वह कागा ही बना रहेगा? परन्तु यह मेरे विचार में नहीं आ रहा है।

पवित्र आचारसँहिता

रहा यह कि आज हम इन विचारों को जैसे पूज्यपाद गुरुदेव प्रकट कर रहे हैं, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव यह उच्चारण करते हैं कि गृह आश्रम में माता को अपने गर्भ से बाल्य से वार्ता प्रकट करनी चाहिए। पूज्यपाद गुरुदेव की उड़ान बड़ी विचित्र है, परन्तु मैं यह कहता हूँ कि वार्ता कैसे प्रकट की जाती है, पूज्यपाद उसका निराकरण भी करते हैं और यह कहते हैं कि मौन हो करके माता प्रातःकाल में रात्रि काल में अपने अन्तरात्मा जो उसके गर्भ में विद्यमान है उससे वार्ता प्रकट की जाए, तो पूज्यपाद गुरुदेव इस प्रकार के हेतु देते रहते हैं। परन्तु वाक् बड़ा सजातीय दर्शनों का और वेदों की परम्परा एक चर्चा मानी जाती है। परन्तु जब मैं इस वाक् पर आता हूँ कि पूज्यपाद गुरुदेव यह कहते हैं कि विद्यालयों में ब्रह्मचारिणियों को उपदेश देने वाली वानप्रस्थिनी होनी चाहिएँ और विद्यालयों में वानप्रस्थी होने चाहिएँ, जो गृह से उपराम हो जाएँ और अपने पुत्रो को राज्य दे करके और उसे त्याग दें राष्ट्र को

और गृह को त्यागने वाले हों और वह विचारों जो उपदेश, वे जो उपदेश दें और अपने अनुभव को ब्रह्मचारिणियों को प्रकट कराएँ तो इसमें कोई द्वितीय वाक् नहीं हो सकता कि वह महान् बन जाएँ क्योंकि विद्यालयों में आचार्यों के जो विचार हैं, आचार्यों की जो आचारसँहिता है उसकी प्रतिभा आचार्य के विचारों की, आचार्य के हृदयों की ब्रह्मचारियों के प्रति एक आभाहित हो जाती है। वह ब्रह्मचारियों का हृदय उसी से बनता है क्योंकि जब यह आता है आचार्य कहता है ब्रह्मचारी आ, हममें तीन रात्रि और तीन दिवस में तुम्हें अपने गर्भ में धारण करूँ। कहीं नौ आता है कहीं तीन आता है परन्तु नौ रात्रि ले लिया जाए तो प्रत्येक इन्द्रियों के देखो स्त्रोत का यह विषय बन जाता है। इन्द्रियों को एक-एक इन्द्रिय के ऊपर आचार्य व्याख्या करता है आचार्य अपनी इन्द्रिय को सजातीय बनाता है और ब्रह्मचारियों की इन्द्रियों को सजातीय बना करके वह इन्द्रियों के दोषों को अपने में धारण कर लेता है। पूज्यपाद गुरुदेव ने यह वाक् कई काल में प्रकट किया है परन्तु आज भी मैं उसको उच्चारण कर रहा हूँ और यह वाक् उच्चारण कर रहा हूँ कि वह ब्रह्मचारी एक महानता की आभा में अपनी उड़ानें उड़ता है और विचारणीय एक उपदेश अपने में धारण करता है। वह आचार्य आचारसँहिता में परणित हो जाता है। यदि आचार्य का मेरे पूजयपाद गुरुदेव ने वैज्ञानिक हेतु दी कि महाराजा अश्वपति के राष्ट्र में वैज्ञानिकों ने यन्त्रों का निर्माण किया और महर्षि गाड़ीवान रेवक मुनि ने आचार्यों का बहिष्कार किया ऐसा भी इन्होंने मुझे वर्णन कराया।

कई समय से चर्चाएँ चल रही हैं, परन्तु वह बहिष्कार भी हुआ और वैज्ञानिकों के यन्त्रों का निर्माण जो सर्वशक्ति मानी गई है इसी प्रकार जब विचार आता है, तो यह भी तो वाक् पूज्यपाद गुरुदेव प्रकट कराते रहते हैं। जो राजा के राष्ट्र में शिक्षा प्रणाली है उस शिक्षा प्रणाली में उस द्रव्य का उपयोग होना चाहिए, जिसमें दोष न हो। जिस द्रव्य

में दोष होता है वह जो द्रव्य है जो आह और दाह द्रव्य है वह द्रव्य कदापि भी विद्यालयों को पवित्र नहीं बना सकता। आधुनिक काल के मैं राष्ट्र पर जाऊँ या पुरातन काल के राष्ट्र पर पहुँचू।

महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज की आचारसँहिता

पुरातन काल के राष्ट्र में यह है मुझे स्मरण है पूज्यपाद गुरुदेव ने एक समय मुझे त्रेता के काल में यह कहा कि जाओ तुम वशिष्ठ मुनि महाराज की आचारसँहिता को दृष्टिपात करके आओ। तो मैं पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पा करके और हम आचारसँहिता को दृष्टिपात करने के लिए हम ऋषि के आश्रम में पहुँचे और वह ऋषि माता अरुन्धती एक आसन पर विद्यमान हैं परन्तु ब्रह्मचारियों को उपदेश दे रहे हैं। उनकी प्रातःकाल को जो आचारसँहिता है वह आचारसँहिता है बाल्य प्रातःकालीन सूर्य उदय होने से पूर्व तुम अपने जीवन की आचारसँहिता को बनाना प्रारम्भ करो। वह इसी प्रकार के ब्रह्मचारियों को जब उनका भोज्य हुआ तो जिस पँक्ति में राजा दशरथ के राजकुमार हैं, उसी पँक्ति में द्रव्यहीन प्राणियों के बाल्य हैं। एक पँक्ति में विद्यमान हैं, एक पँक्ति में एक ही प्रकार का भोज्य है उसे आनन्द से प्राप्त कर रहे हैं। तो यह आचारसँहिता आहारों की और वह कैसा आहार था कि राजा दशरथ के यहाँ वह आहार था जिस आहार जिस अन्न से देखो जो कृषकों का अन्न था उनका कृषक जो भूमि में उद्योग कर रहा है वह ब्रह्मचारियों के लिए प्रसन्नता से लिया जा रहा है। वह विद्यालय में भी अपनी आचार क्रियाकलापों में अपने अन्न को उत्पन्न करते रहते थे। उस अन्न को पान करके जब आचार्य और ब्रह्मचारी अपने में कहता 'चक्षु में शुन्धामि, प्राण में शुन्धामि सब प्राण और हृदय-इन्द्रियाँ सब पवित्र बनती चली जाती हैं। यह राष्ट्र का क्रियाकलाप है। मुझे तो ऐसा स्मरण है कि ऋषि वशिष्ठ मुनि महाराज

ब्रह्मचारी थे ओजस्वी और ब्रह्मवेत्ता उनकी पत्नी अरुन्धती ब्रह्मचारिणी ब्रह्म का उद्घोष करने वाली।

अपने पूज्यपाद गुरुदेव के आदेशानुसार जब मैंने आचारसँहिता को दृष्टिपात किया तो रात्रिकाल में वहीं वाटिका में शान्त हो गया। तो वाटिका में विद्यमान हो करके दृष्टिपात किया कि ब्रह्मचारी अपने कक्ष में विद्यमान हो गए हैं। अध्ययन करने के पश्चात् निद्रा की गोद में चले गए और माता अरुन्धती और वशिष्ठ मुनि महाराज अपने में ब्रह्म की चर्चा करने लगे। वह ब्रह्म का उद्गीत गा रहे हैं। माता अरुन्धती कहती हैं भगवन्! इन ब्रह्मचारियों को हम सुयोग्य कैसे बना सकते हैं? वशिष्ठ कहते थे कि देवी! हमारा सुयोग्य बन जाना ही ब्रह्मचारियों का सुयोग्य बन जाना है। यदि हमारा जीवन सुयोग्य नहीं बनेगा तो हम ब्रह्मचारियों को सुयोग्य नहीं बना सकते। हम ब्रह्मचारियों को महान् नहीं बना सकते। इसी प्रकार की चर्चा करते-करते वह लोक लोकान्तरों की उड़ानें उड़ने लगी और दोनों की प्रतियोगिता होने लगी। अरुन्धती कहती कि महाराज यह वशिष्ठ मण्डल क्या है? उन्होंने कहा वशिष्ठ मण्डल अपने लोकों में अपने माला में वशिष्ठ है, जैसे माला में सुमेरु होता है इसी प्रकार यह सुमेरु कहलाता है। और महाराज अरुन्धती मण्डल क्या है? उन्होंने कहा अरुन्धती मण्डल का उस वशिष्ठ मण्डल से समन्वय होता है और दोनों की छाया आ करके और जो बालक माता के गर्भ में देखो नाभि केन्द्र में उसका समन्वय होता है और ब्रह्मरन्ध्र में उसकी छाया आती है, तरङ्गें आती रहती हैं, जैसे सूर्य की किरण होती हैं। इस प्रकार जब मैंने दोनों का सम्वाद दृष्टिपाद किया और उन्होंने कहा प्रभु लोक-लोकान्तरों की माला कैसे बनाई जाती है? उन्होंने कहा देवी! जैसे आचार्य ब्रह्मचारियों की माला बना लेता है और ब्रह्मचारियों के क्रियाकलापों की माला बनाकर के एक सूत्र में पिरो देता है ज्ञान के सूत्र में, इसी प्रकार लोक-लोकान्तरों की माला बनी हुई होती है। यह वाक् शान्त हो करके अपने-अपने कक्ष में जा करके विद्यमान

हो गए। अब मैं भी अपने आश्रम को चला आया, पूज्यपाद गुरुदेव से मैंने सब वार्ता प्रकट कीं तो यह स्त्रोत कहाँ से उत्पन्न हुआ इसका समन्वय राष्ट्र से होता है।

पुरातन काल के राष्ट्र

राष्ट्र किस प्रकार का महान् होना चाहिए, राजा के राष्ट्र में द्रव्य व व्यवहार होना चाहिए जिस पर किसी प्रकार की अपवित्रता न हो। जब मैंने पूज्यपाद गुरुदेव को यह प्रकट किया तो मेरे ब्रह्माण्ड की एक धारा मेरे समीप आने लगी मैं राष्ट्रवाद की चर्चा करने लगा। अब मैं देखो पुरातन काल के राष्ट्र की चर्चाएँ, राष्ट्र अपने में राष्ट्र है कर्त्तव्य का पालन समाज कर रहा है ब्रह्मचारी अपने में कर रहा है, गृहस्थ अपने में कर रहा है और गृह को त्याग करके वानप्रस्थी विद्यालयों में शिक्षा प्रदान कर रहे हैं। वह शिक्षा दे रहे हैं ब्रह्मचारियों-ब्रह्मचारिणियों को महान् बना रहे हैं। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया, यह प्रणाली मुझे ऐसा स्मरण है राष्ट्रीयता में कहलाती है। वह राष्ट्रवाद से ऊँची होती है, यह राजा का कर्त्तव्य है। राजा के यहाँ सबसे प्रथम वह जो विचारों की और वह जो विद्या की संस्कृति की अपनी प्रणाली है उसे सबसे प्रथम महान् बनाना है। यदि राजा के राष्ट्र में शिक्षा प्रणाली पवित्र बन गई है, ब्रह्मचारियों से राष्ट्र पवित्र बन गया है तो जानो कि राजा का राष्ट्र सफलता के मार्ग पर जा रहा है। और यदि देखो आचार्य आचारसँहिता विद्यालयों में नहीं बनी है, राजा का राष्ट्र उसे ऊँचा नहीं बना पा रहा है, क्रियाकलापों को पवित्र नहीं बना रहा है, तो जानो कि राष्ट्र की सूक्ष्मता कहलाती है। यह राष्ट्र की मृत्यु हो जाती है।

महाभारत काल के पश्चात्

आओ, अब मैं आधुनिक काल के राष्ट्र पर जाना चाहता हूँ, महाभारत काल के पश्चात् के राष्ट्रवादों में जाना चाहता हूँ। महाभारत

का काल ऐसा दुर्भागी काल आया इस संसार में जिस काल में बुद्धिमान और ओजस्वी और नाना प्रकार के आयुर्वेदाचार्य सबकी मृत्यु हो गई, सब चले गए। अब अन्धकार छा गया अन्धकार के छाने पर यहाँ नाना प्रकार के रूढ़िवाद, नाना प्रकार के मतों का एक विचार उत्पन्न होने लगा। हमारे यहाँ देखो महाभारत काल के पश्चात् इस पृथ्वी पर सबसे प्रथम देखो स्वार्थियों का काल आया, यहूदी काल आया, बौद्ध काल आया, जैन काल आया। जैन काल के पश्चात् और नाना प्रकार के रूढ़िवादी बने, परमात्मा के नामों पर रूढ़ियाँ बनने लगीं। जब रूढ़ियाँ बनीं तो जब मैं यह विचारता हूँ कि ईसा के मानने वालों ने या यहूदी के मानने वालों ने एक अपना कर्म बनाया विचारों का और क्या कर्म बनाया सृष्टि का प्रारम्भ लिया और मानव जीवन की उत्पत्ति ली। उन्होंने एक आदम से ले ली और एक देवी का निर्माण कहाँ से किया उन्होंने आदम के एक अस्थि से निर्माण स्वीकार किया। तो इस प्रकार यहूदियों ने इस विचार को बनाया, अपनाया। इसी कर्म को हमारे ईसा वालों ने अपनाया, इसी विचार को देखो मुहम्मदवादियों ने अपनाया। और अपना करके देखो जो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव यह उच्चारण कर रहे थे कि माता अपने गर्भस्थल में निर्माण करती है वह पँक्ति में विराजमान करा करके वह ब्रह्मचारियों को उपदेश देते तो उन आचार्यों ने मेरी पुत्रियो का ह्रास किया और एक अस्थि से मेरी पुत्री का देखो जन्म उन्होंने सिद्ध किया। एक ही अस्थि से उसके जन्म उसके शरीर की उत्पत्ति मानी जाती है और उसके मानने के पश्चात् देखो यह ईसा के मानने वालों ने, हिंसा के मानने वालों ने, मुहम्मद के मानने वालों ने यह स्वीकार किया और मेरी पुत्रियो का तिरस्कार होना प्रारम्भ हुआ।

वाममार्ग की उत्पत्ति और परिणाम

उससे पूर्वकाल में यह हुआ कि वाममार्ग में जब अज्ञान आया, यहाँ वाममार्ग की उत्पत्ति हो गई। ब्राह्मण समाज ने, मैं सबको नहीं

कहा करता हूँ, केवल स्वार्थवादियों ने आ करके मेरी पुत्रियो का तिरस्कार करना प्रारम्भ किया और तिरस्कार कैसे रूप में उन्होंने कहा यज्ञ में अधिकार नहीं है देवी को, यज्ञ में अधिकार नहीं आहुति देने का और देखो जब इस प्रकार का तिरस्कार हुआ, मानव समाज का तिरस्कार होने लगा। उसका परिणाम यह हुआ कि इस मानव समाज में जो प्रभु की सम्पदा है, इसी समाज में ब्रह्मस्पतियों का और द्रव्यहीनों का एक विभक्त समाज बन गया। वह समाज कैसे बना वह कुछ स्वर्ण में परिवर्तित हो गए और कुछ अस्वर्ण में परिवर्तित समाज बन गया। उस समाज में स्वर्ण समाज ने देखो वह निर्धन प्राणियों के लिए नाना प्रकार के आक्रमण किए गए। उन आक्रमणों का परिणाम यह हुआ कि आज देखो उनमें रक्त की धाराओं का एक स्त्रोत बनता चला जा रहा है। आज मैं इस वाक् में नहीं जा रहा हूँ। यह सबसे प्रथम जिन राजाओं ने ब्राह्मण समाज की पूजा की, स्वार्थी ब्राह्मणों की पूजा प्रारम्भ कर दी, योग्य ब्राह्मण समाज की पूजा नहीं की, उन अयोग्य ब्राह्मणों ने देखो बुद्धिमान ब्राह्मणों का ह्रास किया और उन्होंने वाममार्ग की प्रथा ला करके और मांस की आहुति देना प्रारम्भ किया। यज्ञ जैसे शुभकर्म में, जो मोक्ष की पहली पगडण्डी है आचार्य कहते हैं क्या यह मोक्ष की पहली एक पगडण्डी कहलाती है। सात पगडण्डी कहलाती हैं मोक्ष में जाने की, परन्तु सबसे प्रथम अहिंसा परमोधर्मः वह अग्नि को प्रदीप्त करके पूजन एक नृत्य बनाया, पूजन किया, उसमें मांस की आहुति देना प्रारम्भ किया। सबसे प्रथम इस समाज ने इस पृथ्वी मण्डल पर जो मांस एक प्रसाद के रूप में प्रदान किया गया, आज वही मांस प्रत्येक गृह में विद्यमान हो रहा है समाज के प्राणियों में। जब मैं इस प्रकार की वार्ता प्रकट करता हूँ, मैं यह कहता रहता हूँ मेरी पुत्रियो का ह्रास हुआ और ह्रास यहाँ तक हुआ कि देखो स्वर्ण जाति बनी और उसी जातीयता में देखो निर्धन जातीयता बनी। उन निर्धन जातियों में भी देखो विभाजन हो गया, स्वर्णता में भी विभाजन हो गया। उसमें मेरी पुत्रियो का देखो

ह्रास होने लगा। एक-एक स्वर्ण का जो द्रव्यपति बन गया उसने मेरी पुत्रियो का जैसे पग-पग्नियाँ होती हैं जो पगों में चरण पादुका होती हैं, एक-एक पाद में दो-दो, तीन-तीन पादुका के रूप में, मेरी पुत्रियो का देखो विलासिता का क्षेत्र बन गया। यही तो विलासिता का क्षेत्र बना। परन्तु देखो अज्ञान आने पर विलासिता का क्षेत्र बना रहता है और विलासिता अज्ञान में होती है। विलासिता ज्ञान में नहीं होती। विलासिता अन्धकार में होती है और प्रकाश में नहीं हुआ करती है।

मैं अपने विचार प्रकट कर रहा हूँ, महाभारत काल के पश्चात् जो नाना प्रकार की रूढ़ियों में यह धर्म परमात्मा का ज्ञान बटने लगा, ज्ञान का विभाजन होने लगा उसी का परिणाम यह हुआ कि आज का जो मानव समाज है वह प्रत्येक मानव आहा दूसरे गर्भ को पान करने में प्रशन्सा कर रहा है, दूसरे के रक्त को पान करने में अपना गौरव स्वीकार करता है और यह कहता है यह आज का जो अस्तित्व है यही मानवीयता माना जाता है। आज का प्राणी यह कहता है परन्तु देखो यह मुहम्मद समाज वालों ने कहा कि यह जो देवियाँ हैं यह ऐसी हैं जैसे पृथ्वी है, यह पृथ्वी हैं। जैसे हम अन्न को उत्पन्न करने लगते हैं इसी प्रकार यह सन्तान को जन्म देने वाली, जैसे एक हमारी कृषि का उद्गम है ऐसी ही देवियाँ हैं। परन्तु जब मुहम्मद के मानने वालों ने यह कहा, तो इसमें देखो रूढ़िवाद आ गया और गौ में ह्रासिता की चर्चा, यह समाज की मेरी प्यारी माताओं का ह्रास होने से, मैं यह कहा करता हूँ समाज में यदि मुहम्मद जन्म न लेता, तो यह समाज में अज्ञान नहीं आ सकता था। आज इस प्रकार के वाक्यों को मैं इसलिए प्रकट कर रहा हूँ कि अज्ञानता का स्त्रोत है, माता का तिरस्कार करना यह कोई बुद्धिमानों का कर्त्तव्य नहीं है। परन्तु देखो ईसा के मानने वाले इसी प्रकार के अज्ञान में हैं। उनका कुछ तो सङ्केत करें और उसका परिणाम यह हुआ कि जिस पातालपुरी में महाराजा अर्जुन का संस्कार

हुआ, जिस पातालपुरी में भीष्म पितामह भ्रमण करते रहते थे और शिक्षा देते रहते थे अस्त्रो-शस्त्रों की और ब्रह्मज्ञान की। आधुनिक जगत् में मैं दृष्टिपात करता हूँ उन पातालपुरी राष्ट्र में अपनी प्राचीन लगभग उन्नीस सौ (1900) पूर्व का कोई साहित्य उनका प्राप्त नहीं हुआ, कोई संस्कृति प्राप्त नहीं हो सकी। इसीलिए वहाँ का प्राणी कहता है, ईसा के मानने वाले कहते हैं कि यह सृष्टि का जो प्रारम्भ है कोई चार हजार (4,000) वर्ष पुराना है, कोई कहता है इसको दस हजार (10,000) वर्ष पुराना, परन्तु यह नहीं कहते विज्ञान का आश्रय ले करके तो अरबों वर्ष पुरानी उत्पत्ति उसमें प्राप्त होती है। परन्तु देखो इसका विचार वैज्ञानिकों ने तो किया किन्तु आज का प्राणी ईसा को मानने वाला अपने ह्रास में परणित हो रहा है। परन्तु इसी प्रकार देखो नाना प्रकार की रूढ़िवाद हैं। मैं इस रूढ़िवाद की चर्चा कर रहा हूँ। इतना इसमें अज्ञान आया है कि दूसरे प्राणियों को भक्षण करने के लिए तत्पर रहते हैं। इसी प्रकार आगे चल करके ईसा के मानने वाले मुहम्मद के मानने वालों ने मेरी पुत्रियो का ह्रास किया और उनको एक-एक अस्थि से बना उनको स्वीकार किया जबकि मानव के शरीर में बहत्तर करोड़ बहत्तर लाख दस हजार दो सौ दो (72,72,10,202) नाड़ियाँ हैं, परन्तु देखो उसमें मुख्य अस्थियाँ हैं एक सौ बीस (120) मुख्य-मुख्य अस्थियाँ मानी जाती हैं। एक अस्थि से मेरी पुत्री का जन्म स्वीकार किया गया। यह कितने अज्ञान की उपलब्धि है, कितना अज्ञान आया है इस समाज में।

माताओं को प्रेरणा

आज मैं इस वाक् को इसलिए उच्चारण कर रहा हूँ कि समाज को जानकारी होनी चाहिए। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को परिचय कराना चाहता हूँ इस प्रकार का क्रियाकलाप मानव समाज में होता है। आज मेरी प्यारी माताओं को देखो, विद्या का अध्ययन करना है, वेद का अध्ययन करना है, आयुर्वेद का अध्ययन करना है, आयुर्वेद ही माताओं

के समीप होना चाहिए। माता जानती है कौन-सी औषधि किस अमुक माह में हम प्रदान कर सकते हैं, इसीलिए आयुर्वेद माताओं के द्वारा होना चाहिए, जो प्रायः अतीत के काल में रहा है माताओं के द्वारा।

अज्ञान काल

परन्तु देखो वह मध्यकाल में भी हुआ है। नाना प्रकार के मत-मतान्तरों का परिणाम यह हुआ और वाममार्ग का कि मेरी पुत्रियो को देखो अज्ञानता में परणित कर दिया और शिक्षा से वञ्चित कर दिया। उसका परिणाम यह हुआ कि मानव समाज एक अज्ञानता के शिखर पर विद्यमान है। इसी प्रकार आज मैं यह वाक् प्रकट करने जा रहा हूँ, जब मैं राष्ट्रवाद की चर्चा करता हूँ और विद्यालयों की चर्चा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने की है, यह जो वानप्रस्थ काल की शिक्षा का एक स्त्रोत है यह महाभारत काल के पूर्व ही समाप्त होने से बना है। महाभारत काल के पश्चात् यह प्रणाली कुछ-कुछ रही।

जिस समय महाभारत के काल में ब्रह्मचारियों को अध्ययन कराना था और उस समय पितामह भीष्म अपने गुरु परशुराम के द्वार ले गए ब्रह्मचारियों को, उन्होंने कहा भगवन्! मेरे पूज्यपाद इन्हें शिक्षा दीजिए। उन्होंने जब उनके मस्तिष्कों का अध्ययन किया आयुर्वेदिक आधार पर तो उसमें से विक्रम और पाँचों पाण्डव और ब्रह्मे सात राजकुमार ऐसे प्राप्त हुए जो इस धनुर्विद्या में पारायण हो करके वह योग्य बन सकते थे। अहा! उस समय पितामह भीष्म से कहा, हे देवव्रत, हे ब्रह्मचारी! तुम्हारे इतने में ब्रह्मचारी सात हैं, इन्हें मैं विद्या प्रदान कर सकता हूँ। उन्होंने कहा भगवन्! यह दुर्योधन इत्यादि, उन्होंने कहा यह योग्य नहीं है। यह शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं, यह मल्लयुद्ध कर सकते हैं, परन्तु देखो उसका उपयोग नहीं कर सकते हैं। जो विद्या प्राप्त करके उसका दुरुपयोग करता है वह आचार्य को और ब्रह्मचारी

को दोनों को रसातल में ले जाता है। इसलिए मैं इन ब्रह्मचारियों को यह शिक्षा प्रदान नहीं कर सकता। उन्होंने यह वाक् स्वीकार नहीं किया। यही द्रोणाचार्य ने अध्ययन तो कर लिया, स्वीकार भी कर लिया अन्तरात्मा ने परन्तु द्रुपद से सँग्राम की प्रणाली उनकी इच्छा बनी हुई थी। वह द्वेष में शिक्षा दी और उसका परिणाम यह हुआ कि महाभारत का क्षेत्र एक द्वेषी क्षेत्र बन गया। यदि द्रोणाचार्य द्वेषी नहीं होते, प्रतिज्ञाबद्ध नहीं होते, द्रोण जब द्रुपद से प्रतिज्ञा करके आए तो तेरी मुक्ति मेरे द्वार पर होगी, यही द्वेष की भावना महाभारत काल में अयोग्य को शिक्षा दी और अयोग्य योग्य का विचार न हो करके महाभारत सँग्राम का क्षेत्र बन गया। द्वेष का क्षेत्र बन गया, मेरी प्यारी माताओं के शृंगार का हनन होने लगा। परन्तु देखो इसी का परिणाम यह है कि जो कुछ हो रहा है इसको मैंने पूज्यपाद गुरुदेव से वर्णन किया। उसी से वाममार्ग बनता है उसी से नाना प्रकार के देखो यह रूढ़िवाद बनता है।

महाभारत काल से पूर्व कोई साहित्य ऐसा प्राप्त नहीं होता जो परमात्मा के दर्शन के ऊपर किसी प्रकार का विभाजन है। यह महाभारत काल के पश्चात् विभक्त क्रिया हमें प्राप्त होती रहती है। इन्हीं वाक्यों का उच्चारण करता रहता हूँ। यही विचारधारा जब मेरे हृदय में आती है, जिन गौ का हमारे राष्ट्र में पशुओं का पूजन होता है, उन पशुओं को आहार किया जाता है। उसके गर्भ में देखो वाममार्ग समाज है, उसके गर्भ में राष्ट्र की प्रणाली होने का एक अद्भुत कृत्य माना गया है। वाममार्ग समाज में यागों का तिरस्कार किया जो भी मुहम्मद के मानने वाले आए, उन्होंने यागों के ऊपर आक्रमण किया, ईसा के मानने वाले आए उन्होंने याग के ऊपर आक्रमण किया। जिस पातालपुरी में उत्तानपाद का राष्ट्र सुशोभित होता था, जहाँ के नारद मुनि थे। नारद और ध्रुव वह दोनों गुरु-शिष्य की परम्परा से विज्ञान

में प्रवेश हो करके, उनका यान सूर्य लोक में जहाँ उड़ान उड़ता हो, जहाँ ध्रुव की परिक्रमा करने वाला यान हो, ऐसे जहाँ उत्तानपाद जो याग करते थे, ऐसे राष्ट्र में ईसामसीह जैसों का जन्म हुआ और अज्ञान छा गया और वह संस्कृति ही रसातल को चली गई। परिणाम क्या है? आज मैं इसलिए उच्चारण कर रहा हूँ पातालपुरी की वार्ता देखो अर्जुन का संस्कार हुआ, वहाँ की संस्कृति रसातल को चली गई। आज उसका मानव यह कहता है कि हमारी संस्कृति आनी चाहिए, कहाँ से आएगी, कहाँ है वह संस्कृति सब रसातल को चली गई। परिणाम यह है कि जहाँ मेरे पूज्यपाद गुरुदेव हमारी वाणी जिस राष्ट्र में जा रही है वहाँ राम की और कृष्ण की भूमि को यह विचारते हैं कि वहाँ संस्कृति प्राप्त हो जाए। यहाँ का राष्ट्रवाद पतित हो रहा है, यहाँ का मानव समाज वाममार्ग में परणित हो करके दर्शन को समाप्त कर रहा है। परन्तु देखो यह चर्चा तो कल ही प्रकट करूँगा, पूज्यपाद गुरुदेव मुझे समय दे ही देते हैं।

मातृशक्ति का ह्रास

विचार-विनिमय क्या है? मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ कि देखो मेरी पुत्रियो का तिरस्कार हो रहा है। आज बालक को माता के गर्भ में ही माता उसे अशुद्धवाद प्रकट करती है, कहा करती है। देखो जहाँ मेरी प्यारी माता मांस का भक्षण करना प्रारम्भ कर देती है, जैसे मुहम्मद के मानने वाले मांस का भक्षण करते हैं और उसे यह कहते हैं कि हमारे मजहब और धर्म में कहा जाता है, ईसा के मानने वाले ऐसा कहते हैं परन्तु देखो मैं भोले प्राणियों से यह कहता हूँ हे माता! जब तू दाह दायक पदार्थों को पान करेगी, तो तेरे गर्भस्थल में जो शिशु है वह भी दाहवादी बनेगा, उसके हृदय में करुणा नहीं रहेगी। आज जिस माता के गर्भ में विद्यमान हो करके, माता क्रोधी बन रही है, पिता के, पतियों के अपशब्दों को सहन कर रही है, पति अपशब्द कह रहा

है, पत्नि पति को अपशब्द कह रही है वहाँ सन्तानों का कैसे महान् जन्म हो सकता है। वहाँ नहीं हो सकता, परन्तु देखो वहाँ तो क्रूर द्वेश प्रवृत्ति पुत्रो और पुत्रियो का जन्म होगा। जहाँ ब्रह्मचारियों को शिक्षा प्रदान नहीं की जाती, वाक् नहीं आता जहाँ मेरी प्यारी माता जहाँ भोगों को प्राप्त करती हैं वहाँ देखो मिट्टी के पदार्थों को, पृथ्वी के कणों को ले करके उन्हें पान कर रही है, कैसे सन्तान का जन्म पवित्र हो सकता है। मैं बहुत से हेतु तो कल ही प्रकट करूँगा।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मैंने आपको यह वर्णन कराया है कि यह समाज नाना प्रकार की रूढ़ियों में परिवर्तित हो रहा है। जब वैदिक साहित्य के ऊपर विचार करते हैं, मानव दर्शन के ऊपर विचार करते हैं, तो मेरी प्यारी माताओं का देखो पूजन होना चाहिए। वह किसी भी रूढ़िवाद में हों माताओं का पूजन कैसे किया जाए? माता का पूजन यह है कि माता के प्रति अपशब्द नहीं आने चाहिएँ, माता को क्रूर नहीं रहना चाहिए और वह क्रूर जब रहती है जब उनके मनों की इच्छा पूर्ण नहीं होती। माता को बाल्यकाल में, ब्रह्मचर्यकाल में विद्या होनी चाहिए, आयुर्वेद की विद्या, दर्शनों की विद्या। माता का जितना भी क्रियाकलाप है वह संकुचित हो जाएगा और जब यह बुद्धिमान नहीं रहेंगी तो इनकी आवश्यकता क्रूरता में परिवर्तित हो जाएगी। वही क्रूरता इस समाज को ऊँचा न बना करके मानव समाज का तिरस्कार हो जाएगा। राष्ट्रवादी उत्पन्न नहीं होंगे, परन्तु देखो उसका परिणाम यह होगा कि एक स्थली से मुझे एक उद्धृत वाक् प्रकट हो गया।

एक समय ईसा के मानने वाले एक देवालय के पूजक थे। देवालय के पूजकों के भुजों में यह राष्ट्रवाद चला गया था। एक देवी को देखो पुजारी ने कुछ वाक् अपशब्द उच्चारण कर दिया और अपशब्द उच्चारण करने से उस देवी ने उस पर आक्रमण कर दिया और अपने पगों की जो पादुका हैं वह उसके मुखारबिन्दु पर परणित कर दीं।

परणित करने से देखो उसे अपमान प्रतीत हुआ कि इस देवी ने मेरा अपमान कर दिया। वह जो उनकी विचारधारा थी, उन्होंने वह न्यायालय में प्रकट कर दी। जब न्यायालय में देवी से प्रश्न किया गया, देवी! तुमने इस देवालय के पुजारी पर आक्रमण किया? उन्होंने कहा भगवन्! मैं आक्रमण कैसे कर सकती हूँ, क्योंकि महात्मा ईसा ने, ईशु ने यह कहा है कि देवी जो एक अस्थि से इनका निर्माण हुआ है एक अस्थि वाली कैसे सौ अस्थियों वाले पर आक्रमण कर सकती है? न्यायालय में जब यह वाक् आया, तो न्यायालय ने यह विचाराधीन शब्दों के ऊपर विचार किया और वहाँ देखो उनकी याचिका समाप्त हो गई। उन्होंने कहा यदि यह वाक् तुम्हारे इसमें है तो अशुद्ध है, इसका शोधन किया जाए। तो ईसा के विचारों में यह इस प्रकार है, परन्तु न्यायालय में उसका बहिष्कार हो गया। तो परिणाम क्या है इस प्रकार के जो विचार हैं यह समाज को हीनता की वेदी पर ले जाते हैं, हीनता की आभा में ले जाते हैं, परन्तु सृष्टि के प्रारम्भ से एक ही बाबाआदम कहते हैं उसी से उत्पत्ति है।

मानव दर्शन और संस्कृति

हमारे यहाँ सृष्टि का काल ऐसा है कि सृष्टि का जब प्रारम्भ हुआ तो मेरी पुत्रियाँ देखो अपने-अपने योगाचार्यों की आभा से उत्पन्न हुईं। यह वाक् मैं कल उच्चारण करूँगा क्योंकि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे आज्ञा अब नहीं दे रहे हैं। विचार केवल यह है, मैं यही उच्चारण करूँगा कि कल सृष्टि के प्रारम्भ में मानव की उत्पत्ति वैदिक साहित्य में क्या स्वीकार करते हैं और यह नाना प्रकार के रूढ़िवादों में क्या स्वीकर करते हैं, यह तो मैंने संक्षिप्त परिचय दिया है। पूज्यपाद गुरुदेव के और ऋषियों के मन्थन से यह वाक् उच्चारण किया जा सका है और मैं उच्चारण कर रहा हूँ। पूज्यपाद गुरुदेव के चार गुण हैं जो राष्ट्रवाद जिनका निर्णय कर देता है और वह वाक् प्रचलित हो जाता

है। आज का राष्ट्र इनको यह कहता है यह पुरानी संस्कृति हो गई है, अरे नवीनता क्या है संसार में यह जानना चाहता हूँ। अरे जहाँ देखो प्राचीनता अज्ञान, कोई प्राचीन नहीं होता, ज्ञान एक रस रहता है, राजा एक रस रहता है, चरित्र और मानवदर्शन एक रस रहता है। जब मानव चरित्र और मानवीयता एक रस रहती है, तो संस्कृति भी एक रस रहती है संसार में परन्तु देखो उसमें नवीन और वृद्धपन नहीं आया करता है। आज का मानव यह कहता है कि संस्कृति को वृद्धपन आ गया है। अरे भोले प्राणियों! तुम्हारे क्रियाकलापों में वृद्धपन आ गया है, संस्कृति ज्यों की त्यों रहती है। तो मेरे प्यारे पूज्यपाद गुरुदेव आज का मानव समाज यह कहता है। यह चर्चाएँ कल मुझे समय देंगे तो मैं प्रकट कर सकूँगा।

पूज्यपाद-गुरुदेव

मेरे प्यारे ऋषिवर! आज मेरे प्यारे महानन्द जी ने इस ब्रह्माण्ड की चर्चाएँ की हैं और मानव के अदर्शन वाक् की चर्चाएँ की हैं। इनका विचार, इनका मन्थन, इनका अध्ययन मुझे तो बड़ा प्रिय लग रहा है, परन्तु इनके वाक्यों में क्रूरता तो मुझे प्रतीत होती है। क्रूरता के साथ में वाक् में सार्थकता प्रतीत होती है। यदि इस प्रकार का समाज, इस प्रकार का रूढ़िवाद समाज में है, तो यह समाज बुद्धिमानों का बनना चाहिए और इन वाक्यों का खण्डन करना चाहिए और खण्डन अपनी राष्ट्रीय स्थिति में, यह राजा को करना चाहिए, यह विचार होना चाहिए। तो आज का विचार अब यह समापन को जा रहा है। मेरे प्यारे महानन्द जी का कल और हम विचार श्रवण कर सकेंगे। परन्तु आज का विचार क्या है कि मेरे प्यारे महानन्द जी ने बहुत-सी अनोखी चर्चाएँ की हैं जो मानव अज्ञान में, अज्ञानता से सनी हुई हैं, अज्ञानता से गुथी हुई हैं। तो यह अज्ञान नहीं रहना चाहिए। हमारा वाक् तो वेद का वेद मन्त्र ज्ञान की चर्चा कर रहा है, अज्ञान की नहीं कर रहा है। विज्ञान

की चर्चा कर रहा है और वह अन्धकार की चर्चा नहीं कर रहा है। इसलिए **प्रत्येक वेद मन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गा रहा है, उसके गुणों का गुणवादन कर रहा है और उसकी महिमा एक महानता में परणित रहती है।** आज का यह विचार अब समाप्त होने वाला है, समय मिलेगा कल हम शेष चर्चाएँ प्रकट करेंगे। आज का वाक् समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

महर्षि महानन्द जी—अच्छा भगवन्!
पूज्यपाद गुरुदेव—ओ३म् शान्ति!

दिनाँक : 13 मार्च, 1986
समय : दोपहर 3 बजे
स्थान : लाक्षागृह बरनावा

सूचना

सभी आजीवन/वार्षिक सदस्यों को 'यौगिक प्रवचन' पत्रिका प्रत्येक मास की 10/11 तारीख को प्रेषित की जाती है। किसी भी सदस्य को पत्रिका प्राप्त न होने की स्थिति में अपने पोस्ट मैन से एक सप्ताह के समय में जानकारी करें और फिर भी न मिलने की स्थिति में अपने सम्बन्धित पोस्ट ऑफिस में इस विषय में लिखित एक प्रार्थना-पत्र पोस्ट मास्टर साहब को दें जिससे कि पत्रिका न मिलने की खोज-बीन डाक विभाग द्वारा कराके आपकी पत्रिका आपको समय पर मिलनी प्रारम्भ हो जाए। कृपया प्रार्थना-पत्र की एक प्रति पर डाक विभाग द्वारा प्राप्ति के हस्ताक्षर व मोहर लगवाकर हमें भी भेज देवें जिससे कि इस विषय में यहाँ भी डाक विभाग को अवगत करा दिया जाए।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

॥ ओ३म् ॥

ऋषियों के उद्‌गार

1. जिस काल में धर्म की मर्यादा समाप्त हो जाती है उसी काल का नाम कलियुग माना गया है।
2. जिस काल में, जिस राजा की प्रजा शान्त न हो उस समय, उस राजा को पद से गिरा देना धर्म है।
3. मानव के लिए सत्य, असत्य को जान लेना ही मानव का सबसे बड़ा धर्म है।
4. सत्य को विचारने के लिए अपने को विचारा जाता है कि मैं सत्य हूँ या नहीं।
5. बिना विधान यज्ञ करने से यज्ञ न करने के बराबर माना जाता है।
6. जो यज्ञ करो उसमें सङ्कल्प भी महान् ऊँचे होने चाहिए।
7. जब विधान से ऋत्विक नहीं चुने जाएँगे, वह कैसा भी यज्ञ हो वह लाभदायक नहीं होगा।
8. मानव को जीवन की योजना को ऊँचा बनाना चाहिए।
9. आत्मा की दो सत्ताएँ स्वाभाविक हैं, एक ज्ञान दूसरा प्रयत्न।
10. आत्मा का जो भी स्वाभाविक ज्ञान है उसको जगाने के लिए वेद विद्या को ग्रहण करना पड़ेगा।
11. जो भी मानव अभिमान से कार्य करता है उसका एक न एक दिन पतन अवश्य होता है।
12. ब्राह्मण कहते हैं ज्ञानी को, ब्राह्मण उसी को कहते हैं जो प्रकाशमान होता है।
13. संसार में वही मानव सुख पाता है जो किसी का हो जाता है।
14. जो मानव परमात्मा के नियमों का पालन नहीं करता, वह मानव परमात्मा का महाऋणी रहता है।
15. वह परमात्मा महान् से भी महान् और पवित्र है।
16. यह महान् संसार उस परमात्मा को पाने के लिए बनाया है।

॥ ओ३म् ॥

चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायज्ञ

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से एवम् पूज्यपाद गुरुदेव **ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी** महाराज की पावमानी प्रेरणा से चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायज्ञ का आयोजन वैदिक याग समिति गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश के द्वारा **दिनाँक 18 नवम्बर 2018** से **25 नवम्बर 2018** तक सेक्टर नं. 23 संजय नगर, गाजियाबाद के रामलीला मैदान के प्राङ्गण में अत्यन्त हर्षोल्लास के साथ आयोजित किया जा रहा है। जिसमें आप सभी याज्ञिक प्रेमी अपने परिवार, इष्ट मित्रों व सम्बन्धियों सहित सादर आमन्त्रित हैं। यज्ञ की ज्योति को बल प्रदान करने के लिए आपकी आहुति द्वारा यज्ञ का समापन होना अपेक्षनीय है। **आयोजक व निवेदक :** आप और हम।

नम्र-निवेदन

समिति के बैंक के खाते में दान की राशि हस्तान्तरण करने से दानदाताओं का नाम, पता व उद्देश्य इत्यादि की जानकारी बैंक से प्राप्त नहीं हो पाती इसलिए सभी दानदाताओं से नम्र-निवेदन है कि राशि बैंक के खाते में हस्तान्तरण करने के साथ-साथ समिति की वेबसाइट पर या निम्न किसी भी एक पते पर दान राशि का अन्य विवरण सहित सूचना देने का कष्ट करें–

1. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, प्रकाशन मन्त्री
   ए-59, पँचशील एन्क्लेव, नई दिल्ली-110017, फोन : 011-41030481
2. सुश्री नीरू अबरोल, कोषाध्यक्ष
   K-3, लाजपत नगर,-III, नई दिल्ली-110024 फोन : 011-41721294

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

*1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	80.00
*2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	80.00
3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	60.00
*4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	100.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	60.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	80.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	25.00
8.	आत्म-लोक	35.00
*9.	धर्म का मर्म	40.00
10.	शंका-निवारण	35.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्व	40.00
12.	आत्मा व योग-साधना	35.00
*13.	देवपूजा	50.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	125.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	125.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	125.00
17.	रामायण के रहस्य	35.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	45.00
19.	महाभारत के रहस्य	30.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	35.00
21.	रावण-इतिहास	60.00
22.	महाराजा-रघु का याग	30.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	35.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	35.00
25.	चित्त की व वृत्तियों का निरोध	35.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	35.00
27.	पञ्च-महायज्ञ	35.00
28.	अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	40.00
29.	याग-मन्जूषा	40.00
30.	आत्म-दर्शन	30.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मात-दर्शन	30.00
32.	याग और तपस्या	60.00
33.	यागमयी-साधना	35.00
34.	यागमयी-सृष्टि	35.00
35.	याग-चयन	40.00
36.	दिव्य-रामकथा	120.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	35.00
38.	दिव्य-ज्ञान	40.00
*39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	90.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	40.00
41.	आत्म-उत्थान	40.00
*42.	तप का महत्व	40.00
43.	अध्यात्मवाद	40.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	40.00
45.	वैदिक-प्रभा	35.00
46.	प्रकाश की ओर	35.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	40.00
48.	वैदिक-विज्ञान	35.00
49.	धर्म से जीवन	35.00
50.	आत्मा का भोजन	40.00
51.	साधना	35.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	40.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	40.00
54.	यौगिक प्रवचन माला भाग-6	80.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	50.00
*56.	यौगिक प्रवचन माला भाग-7	80.00
57.	माता मदालसा	60.00
*58.	यौगिक प्रवचन माला भाग-8	80.00
*59.	यौगिक प्रवचन माला भाग-9	80.00
60.	यौगिक प्रवचन माला भाग-10	80.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	80.00
62.	यौगिक प्रवचन माला भाग-11	80.00
*63.	यौगिक प्रवचन माला भाग-12	80.00
64.	मानव कल्याण की चर्चाएँ	50.00
65.	प्रभु-दर्शन	50.00
*66.	यौगिक प्रवचन माला भाग-13	80.00
*67.	समाज उत्थान का मार्ग	50.00
*68.	यौगिक प्रवचन माला भाग-14	80.00
*69.	ब्रह्म की ओर	50.00
*70.	ईश्वर मिलन	50.00
*71.	यौगिक प्रवचन माला भाग-15	80.00
*72.	यौगिक प्रवचन माला भाग-16	80.00
*73.	नैतिक शिक्षा	50.00
*74.	यौगिक प्रवचन माला भाग-17	100.00
*75.	आत्मिक ज्ञान	60.00

*सहजिल्द का मूल्य 20 रु. अतिरिक्त है।

पुस्तक प्राप्ति के स्थान

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की अमृतवाणी का साहित्य सँहिता, कैसेट्स, सी. डी. व डी. वी. डी. के रूप में निम्न स्थानों पर उपलब्ध है–

1. श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, लाक्षागृह, बरनावा, जिला–बागपत, (उ.प्र.)। मोबाइल नं 09719622950
2. श्री गुरुवचन शास्त्री, मकान नं. 165/30ए, दक्षिण भोपा रोड़, निकट माढ़ी की धर्मशाला, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर (उ. प्र.)। मोबाइल नं. 09412888050
3. सुश्री. नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-3, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-41721294
4. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, A-59 पंचशील एन्क्लेव नई दिल्ली-110017 दूरभाष नं. 011-41030481
5. श्री जितेन्द्र चौधरी, ए-84, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017, मो. नं. 9811707343
6. श्री अनिल त्यागी सी-47 रामप्रस्थ, गाजियाबाद (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-4165802
7. श्री आशीष त्यागी, सुपुत्र श्री सुशील त्यागी डी-293, रामप्रस्थ, पोस्ट ऑफिस चन्द्रनगर, गाजियाबाद पिन कोड-201011 (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-2642052
8. श्री लोमश त्यागी, 106/4 पंचशील कालोनी गढ़ रोड़, मेरठ, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09410452076
9. श्री शमीक त्यागी, 16ए, आलोक कॉलोनी, अल्कापुरी, हापुड़, (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0122-2316196
10. श्री संजीव त्यागी, 1107, सैक्टर-3, बल्लभगढ़, फरीदाबाद हरियाणा। मोबाइल नं. 09910589486
11. मैं. हर्ष मेडिकोज, ए-2/31, सैक्टर-110–मार्किट नोएडा, फेस-2, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 9899228860, 9871367937
12. श्री पवन त्यागी सुपुत्र श्री राजाराम त्यागी, मौ. खड़खड़ियान, माता, ग्राम खरखौदा, जिला मेरठ (उ.प्र.) मोबाइल नं. 7536097171
13. श्री प्रदीप त्यागी सुपुत्र श्री महेश त्यागी, रघुनिवास 138 सर्वोदय कालोनी, मेरठ रोड़, हापुड़ (उ.प्र.) मोबाइल नं. 9758330473
14. डॉ. अशोक कुमार आर्य, आर्यावर्त कालोनी निकट मुरादाबादी गेट, अमरोहा, जिला-जे. पी. नगर (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09412139333
15. श्री सुमन कुमार शर्मा, जे-380, सैक्टर बीटा-2, ग्रेटर नोएडा, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09313530505
16. श्री सतीश भारद्वाज, ग्राम बहेडी, रोहाना मिल, जिला मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)।
17. मैं. विजय कुमार, गोविन्द राम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23977216

मासिक सहयोग

श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर	1000 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद, हरियाणा	1000 रुपये
श्री ज्ञानेश द्विवेदी	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव चावला, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्री राकेश शर्मा, विराट नगर, पानीपत, हरियाणा	250 रुपये
श्री कृष्ण लाल बत्रा, इन्द्री, जिला करनाल	201 रुपये
मास्टर कवन्धि त्यागी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ त्यागी, अँकुर अपार्टमैन्ट, पटपड़ गंज दिल्ली	101 रुपये
कुमारी अञ्जलि त्यागी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सात्विक त्यागी, अँकुर अपार्टमैन्ट, पटपड़ गंज दिल्ली	101 रुपये
मास्टर अभ्युदय त्यागी, न्यू जर्सी, अमेरिका	101 रुपये
श्री संजय उर्फ टीटू सुपुत्र श्री सोमदत्त त्यागी, तलहटा	100 रुपये

नम्र-निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज ने अपने प्रवचनों में वेदमन्त्रों का गान करते हुए उनकी प्रचलित भाषा में व्याख्या की है। उसी अमृत वाणी को जनकल्याण के लिए ''सँहिता'' रूप में प्रकाशित करने के लिए वैदिक अनुसन्धान समिति सभी श्रद्धालु एवम् दानदाताओं से सहयोग के लिए आह्वान करती है जिससे कि प्रकाशन का कार्य सुचारू रूप से ऊर्ध्वा गति को प्राप्त होता रहे। सहयोग की राशि समिति के बैंक खाते में स्वेच्छानुसार भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्न प्रकार से है–

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.) **PAN No. – AAAAV7866J**

पंजाब नैशनल बैंक, खान मार्केट, नई दिल्ली

बैंक खाता नं. - 0149000100229389, IFSC Code – PUNB–0014900

website : www.shringirishi.in

Email : contact@shringirishi.in

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्‌बोधन

प्रभु! हम चाहते क्या है? हमारी कामना क्या है? हमारी एक ही तो कामना है कि हमारा हृदय स्वच्छ बन जाए। हमारे हृदय में श्रद्धा उत्पन्न हो जाए। हम सत्य को स्वीकार करने लगें। सत्य क्या है? सत्य वह कहलाता है जो प्रभु का दिग्दर्शन है, सत्य मानवीय दर्शन है। मानवीय दर्शन क्या है? अपने में ही अपनेपन का दर्शन करना, वह मानवीय दर्शन कहलाता है।

इसीलिए हे प्रभु! मैं श्रद्धा के क्षेत्र में जाना चाहता हूँ। क्योंकि श्रद्धा हृदय में रहती है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

वर्ष 47 : अंक : 553
अक्टूबर 2018

मूल्यः
दस रुपये

RNI No. 23889/72
Delhi Postal R. No. DL (S)-01/3220/2018-2020
Licence to Post without prepayment
U (SE)-70/2018-2020
POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-10-2018
Published on 5th day of the same month